इकाई 10 पण्डिता क्षमाराव और मीरालहरी

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 वंशपरिचय

10.3 क्षमाराव की साहित्यसर्जना

10.4 अन्य रचनाएं

10.5 सारांश

10.6 बोध प्रश्न

10.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर लेने के बाद आप :

- आधुनिक संस्कृत साहित्य में पण्डिता क्षमाराव का परिचय बता सकेंगें।
- क्षमाराव के परिचय से जानकारी प्राप्त कर उनके जीवन की प्रारंभिक स्थिति का उल्लेख कर सकेंगें।
- कवयित्री के रूप में क्षमाराव का परिचय दे सकेंगें।
- मीरालहरी के साथ–साथ इनकी अन्य रचनाओं का उल्लेख भी कर सकेंगें।
- पण्डिता क्षमाराव के रचना संसार का वर्णन कर सकेंगें।

10.1 प्रस्तावना

आधुनिक संस्कृत साहित्य में 19वीं से लेकर 20वीं शताब्दी तक की कवयित्रियों में तथा कवियों में भी पण्डिता क्षमाराव का नाम आदर के साथ लिया जाता है। आधुनिक संस्कृत साहित्य और साहित्यशास्त्र नामक पाठ्यक्रम के इस खण्ड में आप पण्डिता क्षमाराव और मीरालहरी नामक इकाई का अध्ययन करने जा रहे हैं। जिसमें आपको क्षमाराव के प्रारंभिक जीवन से लेकर अवसान काल तक की समस्त स्थितियों की जानकारी प्राप्त होगी।

पंण्डिता क्षमाराव का जन्म ४ जुलाई १८६० को महाराष्ट्र की विद्यानगरी पुणे में हुआ। पण्डिता क्षमाराव के पिता शंकर पारम्परिक वेदपाठी ब्राह्मण थे। अपने पिता पर क्षमाराव को गर्व था। उन्हें जीवन भर पिता द्वारा भोगे गये कष्ट पीड़ित करते रहे। क्षमाराव ने "शंकरजीवनाख्यानम्" नामक ग्रन्थ में अपने पिता का विस्तृत परिचय दिया है। कोंकण प्रदेश में सावन्तवाड़ी जनपद के बम्बोली नामक ग्राम में डेढ़ सौ वर्षों से एक ब्राह्मण परिवार निवास कर रहा था।इस परिवार में अठारहवीं शताब्दी के आस –पास एक बालक का जन्म हुआ, जो नारायण नाम से प्रसिद्ध हुआ। १८६४ में पिता का देहावसान हो गया। उस समय क्षमा की उम्र तीन वर्ष थी। पिता की मृत्यु के उपरान्त क्षमा के चाचा सीताराम , जो कि बैरिस्टर थे , बड़े भाई शंकर के परिवार को

अपने पास राजकोट ले आये।चाचा सीताराम का क्षमा पर विशेष स्नेह था। किन्तु चाची उनसे बहुत प्रसन्न नहीं रहती थीं। क्षमा की दो बहने और चार भाई थे।

उपर्युक्त तथ्यों का अध्ययन करने के पश्चात् आप मुक्तक काव्यों में मीरालहरी के स्थान का उल्लेख करने में सक्षम हो सकेंगें तथा पण्डिता क्षमाराव के जीवन, रचनाकौशल का विस्तार से वर्णन कर पायेगें।

10.2 वंशपरिचय

संस्कृत साहित्य में विभिन्न विधाओं में साहित्य रचना करने वाली महिला कवयित्रिओं में पण्डिता क्षमाराव का नाम अग्रगण्य है। उनका रचना संसार अतिविपुल है। उनका जन्म ४ जुलाई १८६० को महाराष्ट्र की विद्यानगरी पुणे में हुआ। पण्डिता क्षमाराव के पिता शंकर पारम्परिक वेदपाठी ब्राह्मण थे। अपने पिता पर क्षमाराव को गर्व था। उन्हें जीवन भर पिता द्वारा भोगे गये कष्ट पीड़ित करते रहे। क्षमाराव ने "शंकरजीवनाख्यानम्" नामक ग्रन्थ में अपने पिता का विस्तृत परिचय दिया है। कोंकण प्रदेश में सावन्तवाड़ी जनपद के बम्बोली नामक ग्राम में डेढ़ सौ वर्षों से एक ब्राह्मण परिवार निवास कर रहा था।इस परिवार में अठारहवीं शताब्दी के आस –पास एक बालक का जन्म हुआ, जो नारायण नाम से प्रसिद्ध हुआ। वह निर्धन होकर भी गुणों से धनवान् था ,जैसा यह श्लोक बता रहा है–

बम्बोलीनाम्नि ग्रामे कोङ्कणावनिमण्डले।
सार्धैकशतवर्षेभ्यः पूर्वमासीत् कुलं महत्।।
पण्डिताख्यान्विते यस्मिन् जज्ञे कश्चन् द्विजोत्तमः।
नारायण इतिख्यातो निर्धनोऽपि धनी गुणैः॥

शंकरजीवनाख्यान– १.१–२॥

नारायण का सहोदर पाण्डुरंग निःसन्तान था। कुछ समय बाद उसकी मृत्यु हो गयी। नारायण गाँव के लोगों की चिट्ठी लिख कर अपने परिवार का पालन करता था। इन नारायण के आठ पुत्र और पाँच पुत्रियाँ थीं। पाण्डुरंग की मृत्यु के बाद घर में सभी बालक प्रायः बीमार रहा करते थे , अतः नारायण ने अपने आठ पुत्रों में से सबसे गुणवान् एवं सुयोग्य शंकर नामक अपने पुत्र को प्रेत पाण्डुरंग की सन्तान के रूप में उसे समर्पित कर दिया। शंकर जब ग्यारह वर्ष के थे तभी पिता ने दुर्गा नाम की कन्या से उनका विवाह कर दिया।

पिता शंकर की शिक्षा और जीवन संघर्ष

शंकर गरीबी से इतने पीड़ित थे कि वह स्वयं पुस्तक खरीद कर नहीं पढ़ सकते थे। गाँव में कोई सुशिक्षित वणिक् युवा था, वह अपनी पुरानी किताबें शंकर को दे दिया। शंकर की पढ़ने की लालसा अतितीव्र थी। वह गाँव में गलियों के प्रकाश में घर से बाहर निर्जन स्थान में पढ़ता था , जमीन पर सोता था। इस प्रकार शंकर ने अत्यधिक कठिनाई से अध्ययन किया –

निर्धनोऽपि वरं प्राज्ञो निर्बुद्धेर्धनिकादपि।
निर्धनास्याज्ञता नाम मरणादतिरिच्यते॥
अतः प्राणव्ययेनाऽपि प्राप्स्यामि ज्ञानमर्थदम्।

इति निश्चित्य चानेकानुपायन् स व्यचिन्तयत्।।
आसीत् कश्चिद्युवा ग्रामे वणिक्पुत्रः सुशिक्षितः}
योऽस्मै पठितमुक्तानि पुस्तकानि ददौ प्रियः ॥
वृत्तेषु दिनकृत्येषु पठति स्म स शंकरः।
निशि मार्गप्रदीपेषु निर्जने दूरतो गृहात्।। शंकरजीवनाख्यान– २.११–१४॥

अनेक कठिनाइयों का सामना करता हुआ शंकर अध्ययन में लगा रहा। कुछ दिन के लिये शंकर अपने भाई के साथ वेणुग्राम में रहे। किन्तु उसके कराची चले जाने के बाद वह असहाय होगया। शंकर की दशा देखकर वेणुग्राम निवासी वासुदेव ने उसे अपने पास बुलाया और कहा कि तुम मेरे घर में रह कर अध्ययन करो ? मैं तुम्हारा समग्र व्यय वहन करूगा। यहाँ रहकर शंकर ने मनोयोग से अध्ययन किया –

सुखावासोचिताभ्यासः स्वभ्यासोचितसंस्कृतिः।
संस्कृतेः सदृशारम्भः शङ्करः शङ्करोऽभवत् ॥ वही, ३.२३॥

शंकर ने उच्चशिक्षा प्राप्त की तथा विश्रुत विद्वान् बने।

शंकर का दूसरा विवाह तथा क्षमाराव का जन्म

उनकी पत्नी दुर्गा से एक पुत्री का जन्म हुआ। उसका नाम कृष्णा था। कृष्णा अभी उम्र के तीसरे सोपान में ही थी कि दुर्गा की मृत्यु हो गयी। शंकर इससे बहुत दुःखी हुये। शंकर अनेक कार्यो् में व्यस्त रहते थे। पुत्री कृष्णा की देखभाल करने के लिये घर में कोई अन्य स्त्री नहीं थी। कुछ दिन के लिये उन्होंने पुत्री कृष्णा को अपने भाई के पास भेज दिया, किन्तु वहाँ भी उसकी देखभाल नहीं हो सकी। तब उन्होंने दूसरा विवाह करने का निश्चय किया और उनका दूसरा विवाह सोलापुर के रामचन्द्र नायक नामक शिक्षक की पुत्री उषा से सम्पन्न हुआ। इसी उषा के गर्भ से ४ जुलाई, १८६० को क्षमाराव का जन्म हुआ। क्षमाराव ने अपनी माता उषा, नानी राधा तथा बहन कृष्णा का वर्णन किया है।

पिता की मृत्यु, क्षमा का जीवन संघष, शिक्षा तथा विवाह

इधर पूना में शंकर का जीवन सुखपूर्वक बीत रहा था। १८६४ में उनका देहावसान हो गया। उस समय क्षमा की उम्र तीन वर्ष थी। पिता की मृत्यु के उपरान्त क्षमा के चाचा सीताराम , जो कि बैरिस्टर थे , बड़े भाई शंकर के परिवार को अपने पास राजकोट ले आये।चाचा सीताराम का क्षमा पर विशेष स्नेह था। किन्तु चाची उनसे बहुत प्रसन्न नहीं रहती थीं। क्षमा की दो बहने और चार भाई थे। चाची उन सब के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करती थी। कुछ दिनो बाद सीताराम भी बड़े भाई के परिवार के पालन से मुँह मोड़ने लगे। क्षमा देवी की माता उषा इस सब से बहुत दुःखी हुयी और पति की कमाई का जो भी थोड़ा कुछ उनके हाथ में था, उसी के सहारे अपने परिवार को पालने लगी। गरीबी के कारण क्षमा अपनी पुत्रियों को पढ़ा पाने में समर्थ नहीं थीं। क्षमा भी स्कूल नहीं जाती थी किन्तु अपनी प्रबल मेधा तथा शिक्षा की ललक से वे भाइयों के पाठ को सुनकर कण्ठस्थ कर लेती थीं। उन्होंने राजकोट में रहते हुये अपने स्वाध्याय से मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण किया और अपने नाना रामचन्द्र नायक के घर मुम्बई आगयीं, अध्ययन करने लगीं। उन्हें भारतरत्न पी.वी. काणे जैसे महान् शिक्षक का समर्थन मिला। प्रायः सोलह वर्ष की उम्र में उनका विवाह चालीस वर्षीय राघवेन्द्र राव से सम्पन्न हुआ। डा. राघवेन्द्र लन्दन से एम. डी तथा डी. एस सी उपाधि प्राप्त अति

उदार व्यक्तित्व के चिकित्सक थे। विवाह के अनन्तर क्षमा को किसी चीज का अभाव नही था। उन्होंने जीवन में जितना बड़ा अभाव देखा , विवाह के बाद उन्हें उतनी ही बड़ी समृद्धि और सम्पन्नता मिली। उन्होंने अनेक भाषाएं सीखी। संस्कृत का ज्ञान तो उन्हें पिता से ही मिला था। अब वे लेखन की ओर अग्रसर हुयीं। उनके एक पुत्री हुयी , जिसका नाम लीला था। क्षमाराव ने अपनी पति और पुत्री के साथ अनेक देशों की यात्रा किया। टेनिस तथा घुड़सवारी उन्हें बहुत पसन्द थे। उनकी पुत्री लीला भी इसमें बहुत निपुण थीं। देश विदेश में अनेक खेल प्रतियोगिताओं में उन्होंने भाग लिया और विजयी हुयीं।

10.3 क्षमाराव की साहित्यसर्जना

10.3.1 मीरालहरी

पण्डिता क्षमाराव ने संस्कृत भाषा में महाकाव्यों की रचना भी की है। उनका उल्लेख करने से पहले सर्वप्रथम यहॉ पर उपलब्ध जानकारी के आधार पर मीरलहरी का संक्षिप्त अध्ययन आवश्यक है। मीरालहरी एक मुक्तक काव्य है। इसमें दो खण्ड हैं, दोनों खण्डों में मिलाकर कवि ने कुल चौवालीस श्लोकों में विषय वर्णन को निबद्ध किया है। भाषा सरल और प्रसादयुक्त है। मीरालहरी में भक्तिभाव, समर्पण को मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त करते हुए समाज की कुरीतियों के प्रति विपरीत भाव का एक चित्रण इस प्रकार देखा जा सकता है–

धावल्यं सितनीरजं त्यजति किं पङ्केऽपि नित्यस्थितं
सौभाग्यं विजहति किं हिमगिरिश्छन्नस्तुषारैरपि।
कान्तिं मुंचति किन्नु हीरकमणिर्लोष्टैश्च सन्दूषितः
किं चित्रं यदि धर्मतो न चलिता मीरापि तर्त्सनैः।।

कीचड़ में रह कर भी कमल क्या अपनी घवलता छोड़ता है? तुषार से आच्छादित हो कर भी हिमालय क्या अपना सौभाग्य तजता है? ढेलों के बीच हीरा क्या अपनी कान्ति छोड़ देता है? तो फिर मीरा अपनी सास–ननद आदि के द्वारा धमकाई जा कर भी यदि धर्म से न डिगी तो क्या आश्चर्य।मीरा का वृन्दावन के लिये प्रस्थान के प्रसंग का एक उदाहरण देखें –

वागश्रावि तया हि संस्तुतचरी दिव्या विविक्ताक्षरा
बाले मानुषवल्लभेन सह ते यात्रेह निर्वर्तिता।
त्वं मे संस्मर पूर्वजन्मरमणी तद्राज्यमन्विष्यताम्
यद्वृन्दावनमञ्जुकुञ्जलसितं प्राप्योऽस्मि तत्र व्रजेः।।1।।

अर्थात् मनुष्यजन्म में जो तुम्हारा वल्लभ है, उसके साथ तुम्हारी यह यात्रा सम्पन्न हुयी। पूर्व जन्म में तुम मेरी पत्नी थी , यह स्मरण करो। जो वृन्दावन के समान सुन्दर कुंजों से सुशोभित हो, उस स्थान को खोजो। मैं तुम्हें वहीं प्राप्त होऊँगा , इसलिये वहीं जाओ।

मीरा का गाँवों में होते हुए स्वागत का एक उदाहरण–

सोढासह्यपरिश्रमां धृतजरत्कन्थां प्रसन्नाकृतिं

काषायाम्बरधारिणीमभिगतां ग्रामेषु संवीक्ष्य ताम्।
तत्पादावनिजन् पयःफलमदुस्तस्यै तदङ्कं ययुः
शालीनप्रमदाः सुवृत्तपुरुषा हर्षेण बालार्भकाः।।3।।

फटी हुयी कन्था को धारण करने वाली , प्रसन्न आकृति वाली , कषाय वस्त्र धारण करने वाली , उस मीरा को गाँवों में देख कर संस्कारवती सत्कुलोत्पन्न महिलाओं ने उसके पैर धोये , सज्जन पुरुषों ने उसे दूध औरजल दिया तथा बालक हर्ष से उसके पास गये।

मीरा के सौन्दर्य का उदाहरण –

बिभ्राणा शरदिन्दुकान्तिरुचिरां पुण्याकृतिं योगिनी
चेतः सर्वजनातिशायिसुगुणस्तोमोज्ज्वलं पुष्णती।
स्वप्रासादिकदर्शनेन जनतां विस्रम्भमापादयद्
वाचोयुक्तिविचेष्टितैर्मुनिसमं पूजामवापच्च सा।।6।।

शरत्कालीन चन्द्रमा के समान रुचिर पवित्र आकृति को करने वाली , समस्त लोगों को अतिक्रान्त करने वाले विवेक , वैराग्य आदि गुण समूहों से उज्ज्वल चित्त को धारण करती हुयी वह योगिनी मीरा अपने प्रसन्नतायुक्त दर्शन से जनता में विश्वास उत्पन्न कर रही थी। उसने अपनी वाचिक युक्तियों से मुनियों के समान पूजा प्राप्त किया।

अङ्गीकृत्य समर्हणामखिलशः सद्ध्यानसन्दानिता
यावद्रात्रि समाधिनिश्चलमनास्तस्थौ जनैः संवृता।
प्रातर्व्युत्थितमानसा द्युतिमती योगार्णवान्निर्गतां
सम्प्रापाद्भुतसंस्मृतिश्रियमहो स्वस्याः पुराजन्मनः।।7।।

समस्त लोकों (भक्त जनों) से पूजा स्वीकार करके परमात्मा के ध्यान में आबद्ध चित्त वाली, समाधि से निश्चल मन वाली, लोगों (भक्त जनों) से घिरी हुई वह मीरा सम्पूर्ण रात भक्तमण्डली के साथ बैठी रही। प्रातःकाल बहिर्मुख चित्त वाली, वह तेजस्विनी योग समुद्र से निकली हुई अपनी पूर्वजन्म की लक्ष्मीनारायण विषयक अद्भुत स्मरण शोभा को प्राप्त हुई।

मीरा की मनोभावना का एक उदाहरण –

राधाहं रमणी पुरा यदुपतेरित्यात्मना निश्चिता
बभ्राम प्रतिदेशमुत्सुकमतिर्वृन्दावनालोकिनी।
स्थानं स्थानमभूत्तया परिचितं रूपान्तरेऽपि स्थितं
तच्चेतोऽम्बुनिधौ तरङ्गनिवहाः प्रादुर्बभूवुः स्मृतेः।।8।।

पूर्व जन्म में मैं मीरा भगवान् श्रीकृष्ण की राधा थी'। इस प्रकार स्वयं योग महिमा से निर्धारित करके मीरा वृन्दावन को देखती हुई औत्सुक्य भाव से युक्त हो गई। वह प्रत्येक देश में भ्रमण करती रही। प्रत्येक स्थान यद्यपि भिन्न भिन्न रूपों वाला था तथापि प्रत्येक स्थान विशेष मीरा के लिए परिचित था। उन्हें देखकर उसके मन रूपी सागर में पूर्व जन्म की स्मृति के तरङ्गों के समूह उत्पन्न हुए।

मीरा की पूर्व जन्म की स्मृति का उदाहरण–

असीदत्र मनोरमः किल मम प्रेमाश्रयो मण्डपः
स्फूर्जद्दिव्यसुगन्धहारिकुसुमः प्रच्छायशीतान्तरः।
यत्रादौ रमणीयकैतवजुषा नीता मम प्रेयसा
जाता पाणिसरोजलालितवपुः सर्वाङ्गकम्पाकुला।।9।।

इस स्थान पर मेरे प्रणय का मण्डप था। जिसका अन्तर्भाग रमणीय, उत्कट दिव्य सुगन्ध, मनोहर फूलों एवं सघन तथा शीतल छाया से युक्त था। जहाँ पर सर्वप्रथम प्रेम सम्बन्धी सुन्दर बहाने बनाने में निपुण मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण के द्वारा मैं ले जाई गई तथा उनके हस्त कमलों के संस्पर्श से मेरा शरीर तथा समस्त अङ्ग कम्पन्न युक्त हो गये थे।

निर्यातां पितुरालयात्प्रथमतः कामानभिज्ञामसौ
दृष्ट्वा नम्रमुखीं शनैर्जपति मे मन्नाम कर्णे प्रियः।
ईषत्स्मेरमथाननं मृदु सरोजातेन कण्डूयते
नेत्रान्ते किमपीव वीक्ष्य सहसा गण्डस्थलीं चुम्बति।।10।।

मेरा प्रियतम श्रीकृष्ण पिता के घर से पहली बार निकली हुई तथा मदन व्यापार से अपरिचित, झुके हुए मुख वाली मुझ मीरा को देखकर वह मेरे कानों में धीरे से मेरे नाम का उच्चारण करता था। मन्द हास से युक्त मेरे मुख को कमल के समान कोमल अपने हाथों से धीरे धीरे सहलाता था। मेरे नेत्र के प्रान्त भाग में रोमांच जैसा कुछ देखकर वह सहसा मेरे कपोल स्थलों को चूम लेता था।

स्मारं स्मारमितस्ततः परियती वाचोद्गिरन्ती स्मृतं
प्राहात्रैव विहारकुञ्जमभवद्देवेन्द्रवाटीनिभम्
यस्यान्तर्मम वासकं विरुरुचे कन्दर्पदर्पावहं
मुग्धा वामतयापि तस्य दयिता जातात्र धन्यास्म्यहम्।।11।।

इस प्रकार से पहले कहे गये प्रसङ्गों को याद कर कर के इधर उधर घूमती हुई वह मीरा वाणी से उच्चारित करती हुई बोली– यहीं पर नन्दनवन के समान सुन्दर मेरा क्रीडा भवन था। जिसके अन्दर मेरा कामदेव को उद्दीप्त करने वाला शयन गृह सुशोभित होता था। इसी स्थान पर मैं अप्रगल्भा प्रतिकूल चेष्टा वाली होकर भी श्रीकृष्ण की प्रियतमा बनी इसलिए मैं धन्य हूँ।

सार्धं तेन गतैकदा ह्रदवरं लीलाप्रियेणोत्सुका
दृष्ट्वा तत्र निपातुमुत्सुकतरा गोपीः प्रियं लोचनैः।
तन्मन्दस्मितनिर्जितान्ययुवतीश्चालोकितुं निःसहा
सद्यः सर्वविरागिणी निरगमं तत्प्रीतिनाथा ह्रदात्।।12।।

एक बार मैं लीला विलास में अत्यधिक रुचि रखने वाले श्रीकृष्ण के साथ उत्कण्ठित होकर श्रेष्ठ सरोवर में गई। वहाँ अपनी आँखों से मेरे प्रियतम श्रीकृष्ण को प्रेम भरे नेत्रों से देखने की इच्छा वाली गोपियों तथा उसके मन्द मुस्कान से जीती गई युवतियों को देखने में मैं समर्थ नहीं हो सकी। मैं पूर्व सङ्कल्पित समस्त क्रीडाओं से निःस्पृह होकर उस सरोवर से निकल गई, जबकि श्रीकृष्ण के प्रेम की एकमात्र मैं ही शरण थी।

ईर्ष्यावेगभरावसन्नहृदया बाणैर्मृगीव क्षता
शय्यागारभुवस्तलेऽहमशये व्याकीर्णभूषाम्बरा।
तावच्चौत्य शनैर्ममाङ्गममृशज्जीवेश्वरस्तत्क्षणात्
स्पर्शानन्दसुधानिषिक्तमिव मे प्रक्लिन्नमासीद्वपुः।।13।।

उन गोपियों की वैसी स्थिति से मेरा मन ईर्ष्या के अतिशय आवेग से अभिभूत हो गया। मैंने अपने समस्त वस्त्रों और आभूषणों को उतारकर इधर उधर फैला दिया और अपने शयन गृह की भूमि में बाणों से विद्ध मृग के समान लेट गई। उसी समय मेरे प्राणनाथ श्रीकृष्ण ने आकर धीरे से मेरा स्पर्श किया और मेरा शरीर स्पर्श के आनन्द रूपी अमृत से भीग सा गया।

गत्वा किञ्चिदथाब्रवीदिह पुरा रम्या बभूव स्थली
रेमेऽत्रास्मदुपाश्रितो मृगगणः पुष्टिं गतः शाद्वले।
आवामत्र हि चन्द्रिकाधवलिते कुञ्जोपसीम्नि स्थितौ
हन्तारुन्तुदमुच्चकैरशृणुवाक्रन्दस्य दीनध्वनिम्।।14।।

तदनन्तर कुछ दूर जाकर मीरा बोली– इस स्थान पर पूर्वकाल में एक सुन्दर स्थान था। जहाँ पर हमारे द्वारा पाले गये तथा घास से पुष्ट मृगों का समूह क्रीडा करता रहता था। मैं और श्रीकृष्ण ज्योत्स्ना से धवलित लता गृह के समीपस्थ प्रदेशों में विहार करते रहते थे। खेद है कि यहाँ पर हम दोनों ने अत्यन्त पीडाकारी करुण स्वर को सुना था।

तत्रोपेत्य सवल्लभा सपदि मत्पुत्रीकृतं शावकं
निष्पिष्टं तरुशाखया पतितयाद्राक्षं मुमूर्षाकुलम्।
मात्रा नेत्रजलस्नुता यमकरादाकृष्य वा रक्षितुं
गाढाश्लिष्टकलेवरं मृदुवपुर्लावण्यचेतोहरम।15।।

उस दीनध्वनि को सुनकर मेरी आँखों से आँसू बहने लगे मैं अपने प्रियतम श्रीकृष्ण के पास वहाँ पहुँची। मैंने यह देखा कि मेरा द्वारा पुत्र के रूप में स्वीकृत हरिण शावक गिरी हुई पेड़ की डाल के नीचे दबकर पिस गया है। वह मरणासन्न है। माता उसकी रक्षा के लिए उसे यमराज के हाथ से खींच रही है और उसके शरीर का गाढ आलिङ्गन कर रही है। उस हरिण शिशु का शरीर अत्यन्त कोमल है तथा वह अपने सौन्दर्य से किसी के भी मन का हरण कर रहा है।

दृष्ट्वा मां करुणस्वरेण हरिणी चिच्छेद मर्माणि मे
सार्धं शावकजीविते विहितया प्रत्याशया मे क्षणात्।
मामालोक्य परीतवाष्पनयनामाचष्ट नाथः प्रिये
मा शोकं वह दैवतन्नमखिलं जातस्य मृत्युर्ध्रुवः।।16।।

मुझे देखकर अपने शावक के प्राणों पर प्रत्याशा रखने वाली वह मृगी अपने करुण चीत्कार से क्षण भर में मेरे हृदय को बींध डाला। श्रीकृष्ण ने आँसुओं से भरी आँखों वाली मुझे देखकर कहा– हे प्रिये ! शोक मत करो। सब कुछ दैवाधीन है। जिसका जन्म हुआ है उसकी मृत्यु सुनिश्चित है।

इत्येवं जननान्तरस्मृतिचयं युक्तात्मना बिभ्रती
श्रीकृष्णैकपतिव्रता समधिकश्रद्धाममुष्मिन्दधौ।
राकायाः शशनो द्युतिः क्षयमुपैत्याकृष्णपक्षाश्रया–
न्मीराया यशसः प्रभा तु विमला वृद्धिं प्रपेदे ततः।।17।।

इस प्रकार से योगात्मक मन से पूर्व जन्म की स्मृतियों को धारण करती हुई वह मीरा श्रीकृष्ण में अत्यधिक श्रद्धान्विति हो गई। पूर्णिमा के चन्द्र की कान्ति कृष्ण पक्ष का आश्रय करने से नष्ट होने लगती है किन्तु उसी कृष्ण का आश्रय लेने से मीरा के यश की धवल आभा वृद्धि को प्राप्त हो गई।

तत्तेजः शतशश्चकर्ष जनतां सूचीमिवायोमणिः
प्राप्यैनां हि विनीतभिक्षुकवरः कोऽपि प्रणम्याब्रवीत्।
भद्रे देहि शिवशङ्करं किमपि मे किं भद्र दद्यामहं
यद्यन्मे चिरमीप्सितं सुभग तत्पृच्छेति सोवाच तम्।।18।।

उस तपस्विनी मीरा के तेज ने जनता को उसी प्रकार आकृष्ट किया जैसे चुम्बक सुई को खींच लेता है। मीरा के पास जाकर कोई विनीत भिक्षुक श्रेष्ठ उसे प्रणाम करते हुए बोला– हे देवि ! मुझे कोई कल्याणकारी तत्त्व प्रदान करो। यह सुनकर मीरा ने उससे पूछा– हे भद्र ! मैं तुम्हें क्या प्रदान करूँ यह बताओ। इस पर भिक्षुक ने पुनः कहा– हे देवि! मुझे चिरकाल से जो अभीष्ट है वह प्रदान करो। इस पर मीरा बोली – हे सुभग ! तुम अपना चिर अभीष्ट बताओ।

विश्वासोक्तिमिमां निशम्य तरुणः सन्त्यज्य वेषच्छलं
स्वात्मानं प्रकटीचकार सहसा तस्थौ च बद्धाञ्जलिः।
साभिज्ञाय पतिं पपात चरणे गङ्गेव विष्णोः पदे
भद्रे गच्छ मया सहेति वचनं श्रुत्वा तथैवाकरोत।।19।।

उस तरुण भिक्षुक ने मीरा की इस विश्वासोक्ति को सुनकर अपने छलिया वेश को छोड़ दिया और अपने वास्तविक स्वरूप को प्रकट किया तथा हाथ जोड़कर मीरा के सामने खड़ा हो गया। मीरा अपने पति को पहचान गई तथा जैसे गङ्गा विष्णु के पैरों में गिरती है उसी प्रकार उस राजपुत्र के पैरों में गिर पड़ी। उसका पति बोला– हे भद्रे ! मेरे साथ चलो। ऐसा सुनकर मीरा उसके साथ चल पड़ी।

या तस्या विगमाद्विदूनहृदया विच्छायसन्दर्शना
विध्वस्ताखिलभाग्यलक्षणगुणा दीनावतस्थे चिरात्।
सेदानीं पुनरागमात् प्रमुदिता विष्वग् विसारिप्रभा
सौभाग्याङ्कभृता चितोरनगरी रेजे महौजस्विनी।।20।।

मीरा के बाहर चले जाने से जो चित्तोड़ नगरी दुःखित हृदय वाली हो गयी थी तथा जिसका स्वरूप निस्तेज हो गया था, समस्त सौभाग्य लक्षण नष्ट हो गये थे और वह दीन–हीन दिखाई दे रही थी। वही महा ओजस्विनी चित्तौड़ नगरी मीरा के पुनः प्रत्यागमन से प्रमुदित हो उठी तथा अपनी चतुर्दिक् व्याप्त कीर्ति से युक्त सौभाग्य लक्षणों से सुशोभित हुई।

मीरा के आगमन से चित्तौड़ नगर की स्थिति का वर्णन–

निःशब्दः सुरमन्दिरे क्वचिदभूद्यो जैत्रघण्टागणः
या वीणामुरजावलिः समभवन्मौनव्रतालम्बिनी।
ये वा नूपूरकङ्कणाः समभजन्मूकत्वमाकस्मिकं
ते सर्वे मुखरा बभूवुरधुना मातुः पुरो वार्भकाः।।21।।

मीरा के चले जाने से उसके श्रीकृष्ण मन्दिर में बजने वाला जय घण्टा निःशब्द हो गया था। जो वीणा और मृदङ्ग आदि शान्त थे तथा जो नूपुर और कङ्कण सहसा मूक हो गये थे वह सभी मीरा के पुनः आ जाने से उसी प्रकार से मुखर हो गये जैसे माता सम्मुख शिशु मुखर हो उठता है।

स्वातन्त्र्यं परमं प्रशस्तमनसा पत्या स्वयं प्रापिता
सा निर्बाधतया चचार नियमैस्तावत्सुतीव्रं तपः।
यावज्जीवितसूत्रमैहिकपतेरत्रोटि दैवेच्छया
सौभाग्यं समरक्षि दिव्यदयितव्यासङ्गतोऽस्याः पुनः।।22।।

मीरा के पति उदारचेता भोजराज ने उसे परमस्वतन्त्रता प्रदान की। जिससे मीरा बिना किसी बाधा के नियमपूर्वक कठिन तपस्या करने लगी। दैवयोग से मीरा के पति भोजराज की मृत्यु हो गई किन्तु मीरा ने श्रीकृष्ण के सहवास से अपने सौभाग्य की रक्षा किया।

10.4 अन्य रचनाएं

पण्डिता क्षमाराव का रचनासंसार अद्भुत है। इनकी अनेक प्रकाशित कृतियों में महाकाव्य, लघुकथाएं आदि आते हैं। महाकाव्यों के नाम इस प्रकार हैं–

श्रीतुकारामचरित, श्रीरामदासचरित और श्रीज्ञानेश्वरचरित।

श्रीतुकारामचरितम्, श्रीरामदासचरितम् और श्रीज्ञानेश्वरचरितम् –ये तीनों ही रचनाएं महाराष्ट्र के तीन महान् सन्तों के जीवन पर लिखी गई हैं। एक ओर, पाण्डिता क्षमा जैसी प्रबुद्ध लेखिका ने भारतीय स्वातन्त्रता संग्राम के महानायक महात्मा गान्धी के जीवन और दर्शन को अपने लेखन का विषय बनाया तो दूसरी ओर इन तीन सन्तों के जीवन पर अपनी लेखनी चला कर भारतीय जीवन को परम्परागत नैतिकता, पवित्रता एवं सहज मानव–प्रेम से प्रवर्तित करने की ओर भी अपने द्वारा एक साहित्यिक प्रयास किया। वस्तुतः आधुनिक संस्कृत साहित्य में सन्तों के जीवन पर लेखन का कुछ पहले, उन्नीसवीं शताब्दी में ही नया आयाम खुल चुका था। सन्त तुकाराम का जन्म तीन सी वर्ष पूर्व शिवाजी के समय एक तथाकथित शूद्र कुल में हुआ था। उन्हें वंशानुक्रम से भगवान् पाण्डुरंग के प्रति अगाध भक्ति का संस्कार प्राप्त हुआ था। सर्गों में लिखित श्रीतुकारामचरित में उनके जीवन की विविध घटनाओं का वर्णन है। श्रीरामदासचरितम् में तेरह सर्ग हैं। शिवाजी के गुरु इस महान् सन्त ने अपने शिष्य शिवाजी महाराज को देश की रक्षा के लिए प्रवृत्त किया और उन्हें अपने आशीर्वाद का बल दिया। इस रचना में भारत के अनेक पवित्र स्थानों का वर्णन है। श्रीज्ञानेश्वरचरितम् में आठ सर्ग हैं। तेरहवीं शताब्दी में उत्पन्न महान् सन्त ज्ञानेश्वर की "ज्ञानेश्वरी'' (गीता पर लिखित व्याख्या) से लगभग सभी परिचित हैं। पण्डिता क्षमा ने अपने जीवन के अन्त में, कुछ

ही दिन पूर्व इसे लिखकर समाप्त किया था। सन्त ज्ञानेश्वर को अनेक प्रकार के सामाजिक अत्याचारों से जूझना पड़ा था। उनके मन में मानव मात्र के प्रति अपार करुणा थी। कवयित्री ने उनके जीवन को भी विषय बनाकर भोगेश्वर्यपरायण मनुष्य के लिए वेदान्त के प्रशस्त मार्ग पर चल कर अपने को सार्थक बनाने की ओर संकेत किया है। अपनी उपदेशात्मकता के बावजूद इन तीनों कृतियों में भारतीय परम्परागत मानवीय चेतना को शब्द–रूप मिला है। क्षमा ने इन महापुरुषों के जीवन–चरित के ऊपर काव्य–निमार्ण के माध्यम से आधुनिक संस्कृत साहित्य के क्षेत्र में शृंगार और प्रशस्तिगान की संकीर्ण मानसिकता से ऊपर उठकर लिखने का मार्ग भी प्रशस्त किया है। कवयित्री क्षमा की शैली का एक उदाहरण, श्रीतुकाराम के अन्तर्हित होने के क्षण को लेकर लिखित इस पद्य में देखा जा सकता है–

निस्तेजाः समजायताम्बरमणिर्दिव्यप्रणानिर्मितो
विताइवाखिनृणां सम्मीलिता दृष्टयः।
स्वप्नोदबुद्ध इवेशते जनगणी यावत्समन्तान्नम
स्तावत् सर्वमदर्शि शून्यमनघोऽप्यन्तर्हितस्तापसः।।

भावार्थ यह है कि सूर्य दिव्य प्रभा से रहित होकर निस्तेज हो गया, बिजली की चमक सेहत सीहोर सभी लोगों की आखें बंद हो गयी, लोग स्वप्न से जगे की भांति अभी देखते ही है कि सब ओर शून्य दिखाई देने लगा और पापरहित तापस ने अन्तर्ध्यान प्राप्त किया। इन्होंने अन्य महाकाव्य की रचना भी की है जैसे–सत्याग्रहगीता और शङ्करजीवनाख्यानम् इन दोनों के महाकाव्यत्व को लेकर मतभेद सम्भावित है, किन्तु महाकाव्य के रूप में इनका उल्लेख किया जा रहा है। इसी कारण यह तथ्य इस वर्णन में सम्मिलित है।

सत्याग्रहगीता तीन भागों में विभक्त है। गांधीजी के जीवन पर आधारित इस कृति के प्रथम भाग सत्याग्रहगीता में 1631 से लेकर गांधी–इरविन पैकूट तक की घटनाओं का वर्णन है। द्वितीय भाग उत्तर सत्याग्रहगीता में 1631 से 1644 तक का वर्णन है। अन्तिम भाग स्वराज्य विजय में भारतीय स्वातन्त्रता और उसके स्वरूप का चित्रण है। यह एक ऐतिहासिक काव्य तो है ही, इसका महत्त्व इसलिए भी बढ़ जाता है कि यह बहुत अंश तक अपने चरित्र नायक के जीवनकाल में निर्मित एवं प्रकाशित हो चुका था। सभी भागों का प्रकाशन विभिन्न कालों में बम्बई से किया गया है।

हम यहां तीनों भागों में वर्णित कथानक की चर्चा न करके कुछ अपेक्षित बातों की चर्चा करना चाहेंगे। ये तीनों भाग अध्यायों में विभक्त हैं, इन अध्यायों को सर्ग कहा जा सकता है। इसमें एक मात्र छन्द अनुष्टुप् का सहारा लिया गया है। केवल एक पद्य में मालिनी छन्द का प्रयोग हैं। घटनाप्रधान रचना होने पर भी यथास्थान इसमें विभिन्न अलंकारों का समुचित प्रयोग किया गया है। पण्डिता क्षमाराव का प्राकृतिक वर्णनों के प्रति विशेष झुकाव न होते हुए भी कहीं–कहीं उनके लगाव का संकेत है। चरित्रनायक महात्मा गान्धी के जीवन तथा संघर्ष का उद्देश्य देश की स्वतन्त्रताप्राप्ति यहाँ स्वराज्यविजय के रूप में वर्णित है। कवयित्री ने अपनी देशभक्ति को इस रचनाधर्मिता की प्रमुख प्रवृत्ति मानते हुए कहा है–

तथापि देशभक्त्या ऽहं जाता ऽस्मि विवशीकृता।

अत एवास्मितद्गातुमुद्यतामन्दधीरपि। स.गी १६३

अर्थात् तब भी मैं देश–भक्ति के कारण विवश हूँ। अतः मन्दबुद्धि की होकर भी उसे गाने में प्रवृत्त हूँ।

सत्याग्रहगीता का प्रथम प्रकाशन 1932 ई में पेरिस से हुआ। जो कल्पना चरित्र–नायक महात्मा गान्धी के निजी जीवन दर्शन केकेन्द्र में प्रतिष्ठित थी। क्षमा ने उसे ही अपने शब्दों में प्रस्तुत किया है–

दुर्बला ननु गण्यन्ते शान्तिमार्गावलम्बिनः।
परं सत्याग्रहाद् विद्धि नास्ति तीव्रतरं बलम्। स.गी. 10.35

अर्थात् शान्ति मार्ग अपनाने वाले लोगों की गणना दुर्बल में नहीं की जाती। लेकिन सत्याग्रहसे बढ़कर कोई बल नहीं है, ऐसा जानो। वीर रस के भेदों में नाना वीरों की कल्पना की गयी है। युद्धवीर, धर्मवीर, दानवीर, दयावीर आदि वीरता के प्रकार बताए गए हैं। महात्माजी उन वीरों में परिगणनीय हैं जो स्वराष्ट्र के लिए अपने को बलिवेदी पर चढ़ा देते हैं। कवयित्री क्षमा के सम्पूर्ण सत्याग्रहकाव्य का आकलन करने पर वाल्मीकि और व्यास जैसी मार्मिक अनुष्टुप प्रधान शैली का आभास होने लगता है। सहृदय व्यक्ति भाषा की सरलता के साथ विभिन्न घटनाक्रमों में विभिन्न रस के आस्वाद की व्यञ्जना से तन्मय हो जात है।

यदि कश्चिन्मनुष्यते हिंसां कुर्यात्
कुरुतस्य प्रियं भूयस्तदानृण्यं भजस्व च
द्यद्य दिष्ट्या तु यदि विद्या ते
वितरेतू पण्डितः क्वचित्।
सर्वथा अनुग्रह तस्य प्रतीक्ष परमादरात्।। ७६४८–५

भावार्थ यह है कि यदि कोई सज्जन तुझे सौजन्य से भोजन कराये तो उन्हें अवसर प्राप्त होने पर प्रत्युपकार के रूप में दुगुना दे राजा भी यदि तुझे बड़ी उदारता के साथ पारितोषिक दे तो उसे यदि तू उसके योग्य नहीं, तो न ले। यदि अच्छे मन से कोई आदमी तेरा भला करता है तो उसका प्रिय कर तथा उससे उऋण हो। यदि देवयोग से कोई विद्वान तुम्हे विद्या–दान देता है तो परम आदरपूर्वक सब प्रकार से उसे उसकी कृपा **मान लेनी चाहिए।**

10.5 सारांश

पण्डिता क्षमाराव और मीरालहरी नामक इस इकाई में आपने इनके जीवन और रचनाओं का अध्ययन किया। महाराष्ट्र में इनका जन्म हुआ था। जन्म के तीन वर्ष बाद की आयु से ही पण्डिता क्षमाराव के जीवन में संघर्ष प्रारंभ हो चुका था। शिक्षा और जीवन दोनों घनघोर कठिनाइयों में बीता है। इनके वंश परिचय में आपने इस बात का अध्ययन किया है। चाचा के घर पालन होना, चाची के द्वारा उचित सम्मान प्राप्त न होना आदि की घटनाओं ने कभी इनके जीवन के विकास को अवरूद्ध नहीं किया। बल्कि कठिनाइयों का सामना करते हुए कवयित्री ने अपने जीवन को उत्कर्षपूर्ण तो बनाया ही, साथ में अपनी अर्जित विद्या से समाज को बहुत कुछ प्रदान भी किया। मुक्तक काव्य तो इनके द्वारा रचे ही गये, साथ ही महाकाव्यों की रचना भी इनके द्वारा

की गई। सन्तों के जीवन पर आधारित कथानक का विषय के रूप में ग्रहण करके महाकाव्यों की रचना का विषय बनाया जाना, पण्डिता क्षमाराव के भारतीय संस्कृति और धर्म विषयक प्रेम का पूरा प्रमाण है। संत तुकारामचरितम् श्रीरामदासचरितम् तथा श्रीज्ञानेश्वरचरितम् आदि पण्डिता क्षमाराव की श्रेष्ठ रचनाएं हैं। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप पण्डिता क्षमाराव के परिचय के साथ उनकी रचना धर्मिता का वर्णन कर सकेंगे।

10.6 शब्दावली

पङ्केऽपि	–	कीचड़ में भी
बालार्भका :	–	छोटे बालक
निर्यातां	–	निकल गयीं।
सुवृन्तपुरुषाः	–	सज्जन व्यक्ति

10.7 सन्दर्भग्रन्थ

1. मीरालहरी, पण्डिता क्षमाराव , लेखिका द्वारा स्वयं प्रकाशित।
2. संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास (चतुर्थ भाग), राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, नयी दिल्ली, 2018
3. साहित्यदर्पण, विश्वनाथ कविराज, वाराणसी, 2014
4. वक्रोक्तिजीवितम्, कुन्तक, टीका एवं अनुवाद – रमाकान्त पाण्डेय, जगदीश संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर , 2016